ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print): 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

*(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)*

*Website: www.ijirset.com*

**Vol. 6, Issue 3, March 2017**

# अध्ययन क्षेत्रों और विषयों की समझ

**डॉo राम सरदार**

एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षक-शिक्षा विभाग, का. सु. साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय अयोध्या (उ.प्र.)

## सार

Discipline अंग्रेजी भाषा का शब्द है जिसकी उत्पत्ति लैटिन शब्द 'डिसाइपुलस' (Discipules) शब्द से हुई है जिसका हिन्दी में अर्थ है 'सीखना' या 'आज्ञापालन (To learn or obedience) |कुछ शिक्षाविदों का मत है कि Discipline शब्द अंग्रेजी भाषा के डिसाइपिल शब्द से उत्पन्न हुआ है और 'डिसाइपिल' का अर्थ है 'शिष्य' या छात्र (Pupil) | Discipline शब्द की उत्पत्ति Disciplina से भी मानी जाती है जिसका अर्थ है- अध्यापन (Teaching)। वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र को अध्ययन विषय (Discipline) के रूप में व्यक्त किया जाता है।अध्ययन विषय वस्तुओं तथा घटनाओं के किसी विशिष्ट क्षेत्र सम्बन्धी ज्ञान का संगठन है। इन वस्तुओं तथा घटनाओं के अन्तर्गत वे तथ्य, प्रदत्त, पर्यवेक्षण,अनुभूतियाँ आदि सम्मिलित रहती हैं जो उस ज्ञान के आधारभूत घटकों को निर्मित करते हैं। कोई ज्ञान किसी अध्ययन विषय के क्षेत्र में आता है या नहीं, इसका निर्धारण करने के लिए आधारित नियम एवं परिभाषाएँ निर्मित कर ली जाती है। इस आधार पर अध्ययन विषयों में कुछ विशिष्ट लक्षण परिलक्षित होते हैं। ये लक्षण विश्लेषणात्मक, सरलीकरण, संश्लेषणात्मक, समन्वय एवं गत्यात्मकता आधारित होते है। इसकी संकल्पनात्मक तथा संश्लेषणात्मक दिशा होती है साथ ही प्रत्येक अध्ययन विषयों की एक मान्य संरचना तथा अपना पाठ्यक्रम होता है जिसमें नवीन ज्ञान को समाहित किया जाता है अर्थात् उसके विस्तार क्षेत्र में वृद्धि करके, उसे और अच्छा बनाने, अधिक वैध बनाने के सम्बन्ध में निश्चित नियम होते हैं। चूँकि प्रत्येक अध्ययन विषय का अपना इतिहास एवं परम्पराएँ होती हैं और यही बात उसकी संरचना तथा उसके नियमों के निर्धारण के लिए उत्तरदायी होती है।

## परिचय

एथनी बिगलेन के अनुसार, “शैक्षिक विषय या अध्ययन का क्षेत्र ज्ञान की एक शाखा है जो कि उच्च शिक्षा के एक भाग के रूप में पढ़ाई जाती हैं और जिसका अनुसंधान भी किया जाता है।" Deng Z के अनुसार, "शैक्षिक विषय विश्वविद्यालय के शैक्षिक विभाग की एक शाखा है या क्षेत्र है जो कि अनुसंधान और विद्वता की उन्नति के लिए सूत्रित है। ये शोधार्थी, शैक्षिक लेक्रिया-कलापों और विशेषज्ञों के पेशेवर प्रशिक्षण के लिए सूत्रित है।" शैक्षिक विषय सीखने या अध्ययनशील अनुसंधान की एक शाखा है मुख्यतः स्नातक और स्नातकोत्तर स्तरों में, जो विद्यार्थियों के लिए अध्ययन के कार्यक्रम (Program of study) का ढाँचा प्रदान करती है। ग्लोसबे के अनुसार, "ज्ञान या सीखने की एक शाखा जो महाविद्यालयों या विश्वविद्यालयी स्तर पर पढ़ाई जाती है या जिस पर शोध किया जाता है।" विभिन्न विषयों के विकासवादी इतिहास का पता लगाना आसान काम नहीं है। अध्ययन विषय विकसित होते हैं एवं उनमें पर्याप्त अन्तर भी हैं। अध्ययन विषय का विकास ज्ञान के साथ शुरू होता है जो किसी विशेष सांस्कृतिक परिवेश के व्यक्तिगत अनुभव के रूप में मानव मन और पर्यावरण के बीच सामाजिक अनुभव या बातचीत के माध्यम से विकसित होता है। इसके उद्देश्य संकल्पनात्मक रूप में, सभी सांस्कृतिक और अनुभवात्मक अवरोधों को काटता एवं इस प्रकार अध्ययन विषय के रूप में तैयार हो जाता है।[1]

अध्ययन विषय शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम सन् 1231 ई. में फ्रान्स के पेरिस विश्वविद्यालय में किया गया। उस समय चार प्रमुख विषयों का अध्ययन कराया जाता था। ये विषय निम्नलिखित थे-

1) धर्मशास्त्र (Theology)-इसके अन्तर्गत प्रमुख रूप से दो विषयों, दर्शन शास्त्र एवं मनोविज्ञान का अध्ययन कराया जाता था।

2) कैनन विधि (Canon Law)-इसके अन्तर्गत अर्थशास्त्र एवं मानविकी का अध्ययन कराया जाता था।

3) कला (Art)-कला के अन्तर्गत अभिनय एवं प्रदर्शन कला का अध्यापन किया जाता था।

4) औषधि (Medicine)-औषधि विज्ञान के अन्तर्गत चिकित्सा सम्बन्धी औषधियों का अध्यापन किया जाता था।

अधिकतर शैक्षणिक विषयों का उद्भव 19वीं शताब्दी के मध्य में हुआ जब पारम्परिक पाठ्यक्रम गैर प्रतिष्ठित विषयों भाषा, साहित्य के पूरक के रूप में होता था। इस प्रकार राजनीति विज्ञान,अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, प्रकृति विज्ञान एवं तकनीकी विषय जैसे- भौतिकी,रसायन, जीवविज्ञान एवं अभियन्त्रिकी विषय प्रकाश में आए।[2,3]

20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में कुछ और नवीन विषयों जैसे- शिक्षा एवं मनोविज्ञान को सम्मिलित किया गया। 1970 एवं 1980 ई. में शैक्षणिक विषयों में व्यापक वृद्धि हुई इस दौरान मीडिया अध्ययन, महिला सम्बन्धी अध्ययन आदि सम्मिलित किए गए। छात्रों के भविष्य निर्माण एवं विकास हेतु बहुत से शैक्षणिक विषयों का निर्माण किया गया इसके द्वारा विभिन्न व्यवसायों जैसे- नर्सिंग, आतिथ्य प्रबन्धन एवं सुधार इत्यादि को विश्वविद्यालयों में अध्ययन हेतु प्रारम्भ किया गया।अन्ततः अन्तःविषयी अध्ययन के वैज्ञानिक क्षेत्र जैसे- जैव-रसायन (Biochemistry) एवं भू–भौतिकी (Geophysics) आदि का विस्तृत अध्ययन प्रारम्भ हुआ।

20वीं सदी के उत्तरार्ध में धीरे-धीरे यही व्यवस्था अन्य देशों द्वारा अपनाई गई तथा विषयों में एक सामन्जस्य स्थापित हुआ। 20वीं शताब्दी में ही विज्ञान विषयों के अन्तर्गत भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, जीव विज्ञान,भू-विज्ञान एवं खगोल विज्ञान को सम्मिलित किया गया। सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत अर्थशास्त्र,राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान को रखा गया।

20वीं शताब्दी से पहले विषय वर्ग अत्यधिक विस्तृत होते थे जिसमें अध्ययनकर्ता कम रुचि लेते थे। विज्ञान का शिक्षा प्रणाली से अलग एक व्यवसाय के रूप में भी कुछ अस्तित्व था।उच्चत्तर शिक्षा वैज्ञानिक जाँच के लिए संस्थागत ढाँचा एवं आर्थिक सहायता प्रदान करता है। शीघ्र ही वैज्ञानिक सूचना की मात्रा में तेजी से वृद्धि हुई और लोगों को वैज्ञानिक गतिविधियों के छोटे क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित करने के महत्व का ज्ञान हुआ। इसके वैज्ञानिक विशेषज्ञताओं में वृद्धि हुई तथा विश्वविद्यालयों में आधुनिक वैज्ञानिक विषयों में भी सुधार हुआ।[4,5]
विद्यालय प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए विषयों के ज्ञान का अत्यधिक महत्त्व है।एक विद्यालय का उत्थान तथा पतन दोनों ही विषयों के ज्ञान पर निर्भर है। जिन विद्यालयों में विषयों का अभाव होता है, वहाँ शिक्षा सुचारू रूप से क्रियान्वित नहीं की जा सकी है।विषयों के ज्ञान की आवश्यकता शिक्षक, शिक्षार्थी एवं पाठ्यचर्या तीनों को होती है तथा विषयों के ज्ञान का प्रमुख उद्देश्य इनकी कार्य व्यवस्था में उन्नति एवं सुधार करना है। अतः विषयों के ज्ञान के महत्त्व को इन तीनों के सन्दर्भ में निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है-

1) शिक्षक के लिए अध्ययन विषयों का महत्त्व।(Importance of Disciplines for Teacher)

2) शिक्षार्थी के लिए अध्ययन विषयों का महत्त्व।(Importance of Disciplines for Student)

3) पाठ्यचर्या के लिए अध्ययन विषयों का महत्त्व। (Importance of Disciplines for Curriculum)

## विचार - विमर्श

एक शिक्षक अपने दायित्वों का निर्वहन तभी ठीक प्रकार से कर पाएगा जब उसको विषयगत विषयों का ज्ञान हो। वर्तमान समय में शिक्षक की भूमिका व्यापक हो गई है। अतः उसको समस्त विषयों की सामान्य जानकारी अवश्य होनी चाहिए। एक शिक्षक के लिए विषयों के महत्त्व को निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से स्पष्ट किया जा सकता है-

1) शैक्षिक समस्याओं के समाधान की योग्यता :-

विषयों के ज्ञान के माध्यम से ही एक शिक्षक शैक्षिक समस्याओं का समाधान कर सकता है। अनेक अवसरों पर यह देखा जाता है कि किसी प्रकरण को स्पष्ट करने में उसी संकाय के अन्य विषयों की सहायता की आवश्यकता होती है या किसी अन्य संकाय के विषयों की सहायता की आवश्यकता होती है| इस स्थिति में अन्तः विषयों की प्रक्रिया का उपयोग करके शिक्षक उस प्रकरण को सरल एवं स्वाभाविक रूप में छात्रों को समझा देता है।

2) शिक्षण कला में प्रभावशीलता :-

आधुनिक युग में ज्ञान का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक हो गया है। ऐसे में जब एक शिक्षक द्वारा शिक्षण कार्य किया जाता है तो छात्र द्वारा उससे ऐसे प्रश्न भी पूछे जा सकते हैं जो कि अन्य विषय से सम्बन्धित हो। इस स्थिति में यदि शिक्षक ने अन्य विषयों के विषय में ज्ञानार्जन किया है तभी वह छात्र के प्रश्नों का उत्तर दे सकेगा तथा अपनी शिक्षण कला को प्रभावी बना सकेगा।

3) प्रभावी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का विकास :-

विषयों के ज्ञान के आधार पर ही प्रभावी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का जन्म होता है। विभिन्न विषयों में शिक्षक द्वारा उन शिक्षण विधियों का उपयोग किया जाता है जो कि क्रमबद्ध एवं सुसंगठित रूप में स्तरानुकूल होती है तथा अधिगम गतिविधियों के निर्धारण में सहायक होती है जिससे छात्रों का अधिगम स्तर उच्च तथा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया प्रभावी रूप में सम्पन्न होती है।

4) स्वाध्याय की प्रवृत्ति का विकास :-

विषयों के ज्ञान का प्रमुख उद्देश्य शिक्षकों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति का विकास करना होता है। एक शिक्षक से जब कोई छात्र प्रश्न करता है तो वह यह नहीं जानता है कि उसके शिक्षक का विषय क्या है? वह मात्र अपनी जिज्ञासा शान्त करना चाहता है।प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्तर पर यह तथ्य व्यापक रूप से देखा जा सकता है। इस स्थिति में एक शिक्षक तभी सफल हो सकता है जब वह विभिन्न विषयों का अध्ययन करता हो।

5) सर्वोत्तम दायित्व निर्वहन की योग्यता का विकास :-

विषयों के ज्ञान के आधार पर शिक्षक द्वारा अपने दायित्व का ठीक से निर्वहन किया जा सकता है। अपने ज्ञान के आधार पर ही एक शिक्षक विभिन्न विषयों के मध्य सह-सम्बन्ध स्थापित करता है तथा किसी भी प्रकरण को स्पष्ट करता है। जैसे- सामाजिक अध्ययन का शिक्षक इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, नागरिक शास्त्र एवं समाजशास्त्र के मध्य सम्बन्ध स्थापित करते हुए शिक्षण अधिगम को प्रभावी बनाता है।[6,7]

6) ज्ञान के प्रति व्यापक दृष्टिकोण का विकास :-

विषयों के ज्ञान के माध्यम से ही शिक्षक का ज्ञान के प्रति व्यापक दृष्टिकोण विकसित होता है। उसको विविध प्रकार के प्रकरणों को स्पष्ट करने तथा सामाजिक एवं शैक्षिक समस्याओं के समाधान में विविध विषयों एवं संकायों का सहारा लेना पड़ता है जिससे शिक्षक का ज्ञान के प्रति व्यापक दृष्टिकोण विकसित होता है। इसके आधार पर विज्ञान संकाय से सम्बन्धित शिक्षक कला संकाय तथा कला संकाय का शिक्षक विज्ञान संकाय के विषयों के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त करना चाहता है।

7) सामाजिक समस्याओं के समाधान की योग्यता :-

विद्यालय में सामान्यतः सामाजिक समस्याएँ कम ही आती हैं परन्तु जब आती हैं तो वे काफी विकट स्थिति उत्पन्न कर देती हैं। ऐसे में शिक्षक को विषयों का सहारा लेना पड़ता है। विविध संकायों एवं उनके विषयों के समेकित ज्ञान से समस्या का समाधान सम्भव हो जाता है। जैसे- जातिवाद, छुआछूत, बाल-विवाह आदि की समस्या तथा उसका समाधान।

8) सन्तुलित ज्ञान का अर्जन एवं शिक्षण :-

विषयों के आधार पर ही सन्तुलित ज्ञान का अर्जन शिक्षक द्वारा किया जाता है। वह किसी भी शैक्षिक, व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्या के समाधान के लिए उसके विविध पक्षों का अध्ययन करता है। इसके उपरान्त वह समस्या का समाधान करता है। इस प्रकार वह ज्ञान का सन्तुलित रूप प्राप्त करता है तथा शिक्षण कार्य भी सन्तुलित रूप में करता है।[8,9]

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print): 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

## परिणाम

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि अनुशासनिक ज्ञान की आवश्यकता एक शिक्षक के लिए अनिवार्य रूप से होती है। इस प्रकार विषयों के ज्ञान द्वारा ही एक शिक्षक, सर्वोत्तम शिक्षक बनता है।

विषयों के ज्ञान के माध्यम से एक शिक्षार्थी को सरल एवं स्वाभाविक रूप से अधिगम प्राप्त होता है। यह अधिगम पूर्णतः स्थायी होता है क्योंकि इसमें शिक्षक द्वारा छात्रों की प्रत्येक जिज्ञासा को शान्त किया जाता है। अतः शिक्षार्थी के लिए विषयों के ज्ञान के महत्त्व को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है-

1) सरल एवं स्वाभाविक अधिगम :-

विषयों के ज्ञान के अन्तर्गत अधिगम गतिविधियों में क्रमबद्धता का समावेश होता है। जैसे- प्राथमिक स्तर पर खेल के माध्यम से, उच्च प्राथमिक स्तर पर परियोजना एवं प्रयोग विधि से तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर छात्रों को व्याख्यान विधि से अधिगम कराया जाता है। इससे सरल एवं स्वाभाविक अधिगम होता है।[10,11]

2) उपयोगी ज्ञान का अर्जन :-

विषयों के ज्ञान के माध्यम से छात्रों को उपयोगी ज्ञान की जानकारी प्राप्त होती है क्योंकि विषयों के ज्ञान का प्रमुख आधार उपयोगिता में वृद्धि करना होता है। अतः सभी संकायों के मध्य एक विशेष सम्बन्ध होता है। जैसे- प्राकृतिक विज्ञान,

सामाजिक विज्ञान एवं भाषा शास्त्र तीनों के मध्य एक ही सम्बन्ध तथा उद्देश्य है और वह है छात्रों को उपयोगी ज्ञान प्रदान करना तथा उनका सर्वांगीण विकास करना।

3) अध्ययन विषयों का ज्ञान :-

अधिगम का स्थानान्तरण-छात्रों को यह ज्ञान होता है कि प्रत्येक विषय का सम्बन्ध अपने संकाय के अन्य विषयों से घनिष्ठ रूप से होता है तथा अनेक अवसरों पर इसका सम्बन्ध अन्य संकायों के विषयों से भी होता है इसलिए वह प्राप्त अधिगम को दूसरे विषयों में भी प्रयोग करते हैं। जैसे- गणित के ज्ञान का भौतिक विज्ञान के संख्यात्मक प्रश्नों को हल करने में उपयोग तथा विज्ञान के ज्ञान का समाज में प्रयोग। इससे एक ओर अधिगम में स्थायित्व आता है तो दूसरी ओर अधिगम के स्थानान्तरण की योग्यता छात्रों में विकसित होती है।

4) विषयों के अध्ययन में सरलता :–

छात्रों के समक्ष जब एक अनुशासनिक व्यवस्था के आधार पर विषय प्रस्तुत किए जाते हैं तो उनको पढ़ने में सरलता का अनुभव होता है। जैसे- सामाजिक विज्ञान के विषयों का अध्ययन करने में विषयों के ज्ञान से सम्बन्धित विभिन्न गतिविधियों एवं तथ्यों का समावेश होता है जिसमें एक विज्ञान दूसरे विज्ञान से सह-सम्बन्ध रखता है।

5) सामाजिक समस्याओं का समाधान :-

छात्र समाज में रहकर अनेक प्रकार की सामाजिक समस्याओं का सामना करता है। विषयों के ज्ञान के आधार पर वह सामाजिक समस्याओं का समाधान कर सकता है। जैसे- जाति-पाति, ऊँच-नीच, छुआ-छूत आदि ऐसी ही प्रवृत्तियाँ हैं जिसका छात्रों को भी सामना करना पड़ता है परन्तु अपने ज्ञान के द्वारा वह यह सिद्ध कर सकता है कि ये मात्र सामाजिक बुराइयाँ हैं और कुछ नहीं।

6) व्यापक अधिगम :-

अध्ययन विषयों के ज्ञान के माध्यम से छात्रों के लिए व्यापक अधिगम की व्यवस्था की जाती है। विषयों के ज्ञान के आधार पर विविध विषयों के पाठ्यक्रम एवं उनसे सम्बन्धित गतिविधियों में अन्तः अनुशासनिक प्रवृत्ति पायी जाती है जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक गतिविधि किसी दूसरी गतिविधि से सम्बन्धित होती है तथा उनके मध्य एक सम्बन्ध पाया जाता है। इस प्रकार छात्रों को व्यापक स्तर पर अधिगम प्राप्त होता है।

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print): 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)

Website: www.ijirset.com

Vol. 6, Issue 3, March 2017

7) समन्वित अधिगम :-

अध्ययन विषयों के अन्तर्गत प्रत्येक विषय का सम्बन्ध दूसरे विषय से होता है तथा एक संकाय का सम्बन्ध दूसरे संकाय से होता है। जब किसी समस्या का समाधान खोजा जाता है या किसी नवीन सिद्धान्त, नियम या ज्ञान का सृजन किया जाता है तो इन सभी विषयों एवं संकायों का समन्वित अध्ययन किया जाता है। इस अध्ययन को समन्वित अध्ययन कहते हैं। विषयों की सर्वोत्तम उपयोगी विशेषता यही मानी जाती

8) विषयों के चुनाव में उपयोगिता :-

अध्ययन विषयों के माध्यम से छात्रों को यह ज्ञात होता है कि किस संकाय में उसको कौन से विषय पढ़ने हैं। इस आधार पर वह अपने रुचिपूर्ण विषयों का चुनाव करते हैं। उसी ज्ञान के आधार पर ही छात्रों के समक्ष समानता एवं उपयोगिता के आधार पर विषयों का समूह प्रस्तुत किया जाता है जिसे विज्ञान संकाय, कला संकाय एवं वाणिज्य संकाय आदि के नामों से जाना जाता है। इनसे छात्रों को उचित एवं उपयोगी विषय चुनने में सहायता प्राप्त होती है तथा छात्रों का शैक्षिक विकास होता है।[12,13]

## निष्कर्ष

पाठ्यचर्या को शिक्षा व्यवस्था का तृतीय स्तम्भ माना जाता है। विषयों के माध्यम से पाठ्यचर्या के स्वरूप का सर्वोत्तम रूप में विकास किया जा सकता है। पाठ्यचर्या के अन्तर्गत विषयवस्तु, प्रकरण एवं गतिविधियों के मध्य विषयों की स्थिति देखी जाती है। इन गतिविधियों में सह-सम्बन्ध होने के
कारण शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति के साथ ही छात्रों का सर्वांगीण विकास होता है। अतः पाठ्यचर्या के सन्दर्भ में विषयों के महत्त्व को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है-

1) उपयोगी पाठ्यचर्या का विकास :-

विषयों के माध्यम से उपयोगी पाठ्यचर्या का विकास किया जाता है। विषयों के आधार पर पाठ्यचर्या में समसामयिक समस्याओं का समाधान करने वाली गतिविधियों को सम्मिलित किया जाता है तथा जागरूकता उत्पन्न करने वाले
प्रकरणों को भी सम्मिलित किया जाता है। इसके साथ ही पाठ्यचर्या में सामाजिक अपेक्षाओं का भी ध्यान रखा जाता है क्योंकि उपयोगी तथ्य एक-दूसरे से सहसम्बन्ध रखते हैं।

2) क्रमबद्ध पाठ्यचर्या का विकास :-

क्रमबद्ध पाठ्यचर्या का श्रेय विषयों को ही जाता है। विषयों
आधार पर ही पाठ्यचर्या में तथ्य को किस प्रकार एवं किस स्थान पर रखना है, यह निर्धारित होता है। जैसे- लोकतन्त्र के सन्दर्भ में किसी तथ्य को स्पष्ट करने से पूर्व लोकतन्त्र का अर्थ,
अवधारणा का ज्ञान होना आवश्यक है। इसके उपरान्त ही अन्य तथ्य प्रस्तुत किए जाने चाहिए।

3) विषयवस्तु का समन्वयन :-

विषयों के आधार पर विषयवस्तु में उचित समन्वयन स्थापित किया जाता है। जैसे- भौतिक एवं रासायनिक दोनों परिवर्तन रसायन विज्ञान के विषय हैं तो उनको रसायन विज्ञान के पाठ्यचर्या में सम्मिलित किया जाएगा तथा रसायन विज्ञान को विज्ञान संकाय में सम्मिलित किया जाएगा। विज्ञान संकाय का प्रमुख उद्देश्य समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करना है तथा इन प्रकरणों की व्याख्या सामाजिक सन्दर्भ में भी की जाती है।

4) जीवन से सम्बन्धित पाठ्यचर्या का विकास :-

विषयों के आधार पर पाठ्यचर्या में उन तथ्यों एवं घटनाओं का समावेश किया जाता है जो कि सामान्य रूप से छात्रों के जीवन से सम्बन्धित होती हैं। प्रत्येक छात्र का उद्देश्य जीवन की समस्याओं का समाधान करना होता है। उस कार्य के लिए वह अध्ययन करता है। अतः प्रत्येक पाठ्यचर्या का निर्माण जीवन की प्रासंगिकता एवं उपयोगिता के सन्दर्भ में किया जाता है।

5) सामान्य से विशिष्ट की ओर पाठ्यचर्या का विकास :-

सामान्य से विशिष्ट की ओर पाठ्यचर्या का विकास विषयों का ही परिणाम है। इसमें प्रत्येक सामान्य तथ्य को पहले प्रस्तुत किया जाता है इससे सामान्य तथ्यों के विषय में छात्रों की रुचि जाग्रत होगी क्योंकि छात्र इनके बारे में जानता है। इसके उपरान्त विशिष्ट तथ्यों को पाठ्यक्रम में स्थान प्रदान किया
जाता है; जैसे- गणित के पाठ्यक्रम में पुनरावृत्ति के माध्यम से सामान्य गुणा, भाग, जोड़ एवं घटाव की क्रियाओं के प्रस्तुतीकरण के बाद अन्य नवीन तथ्यों को प्रस्तुत किया जाता है।

6) सिद्धान्त एवं व्यवहार की समन्वित पाठ्यचर्या :-

विषयों के माध्यम से सिद्धान्त एवं व्यवहार की समन्वित पाठ्यचर्या का विकास सम्भव होता है। पाठ्यचर्या में समस्त प्रकरणों एवं तथ्यों का सैद्धान्तिक स्वरूप प्रस्तुत करने के बाद उनकी व्यावहारिक उपयोगिता एवं गतिविधियों का निश्चय
किया जाता है। पाठ्य-सहगामी क्रियाएँ व्यावहारिक गतिविधियों का स्वरूप मानी जाती हैं।

7) स्तरानुकूल पाठ्यचर्या का विकास :-

विषयों के आधार पर ही प्रत्येक स्तर के छात्रों के लिए सर्वोत्तम पाठ्यचर्या तैयार की जाती है। प्राथमिक स्तर पर सामान्य पाठ्यचर्या,प्रतिभाशाली छात्रों के लिए पाठ्यचर्या एवं मन्दबुद्धि छात्रों के लिए पाठ्यचर्या तैयार करने में विशेष ध्यान रखा जाता है। इस प्रक्रिया में पाठ्यचर्या का कठिन स्तर निर्धारित करने में विषयवस्तु के स्वरूप को भी ध्यान में रखा जाता है। पाठ्यचर्या का उद्देश्य समान होता है परन्तु उसके स्वरूप में आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जाता है।

8) शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु पाठ्यचर्या का विकास :-

अध्ययन विषयों के आधार पर ही ऐसी पाठ्यचर्या निर्मित की जाती है जो कि शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति करने में सहायक सिद्ध हो, जैसे- सामाजिक अध्ययन के विषय का उद्देश्य सामाजिक गतिविधियों का छात्रों को ज्ञान कराना है, तथा सामाजिक समस्याओं का समाधान करने की योग्यता प्रदान करना है।
इस आधार पर सामाजिक अध्ययन विषय के अन्तर्गत उन सभी विषयों को पाठ्यक्रम का अंग निर्धारित किया जाता है जो इन उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होते हैं। इस प्रकार विषयों
द्वारा पाठ्यचर्या के सर्वोत्तम स्वरूप का निर्धारण करके शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति की जाती है।[14,15]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि शिक्षक, शिक्षार्थी एवं पाठ्यचर्या तीनों के लिए विषयों का ज्ञान आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण है। विषयों का प्रमुख उद्देश्य शिक्षा व्यवस्था को सर्वोत्तम बनाना है जिससे कि राष्ट्र, समाज एवं प्रत्येक नागरिक का सर्वांगीण विकास हो सके तभी सभी अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेंगे।[15]

## संदर्भ

1) एबट, ए (1988)। पेशे की प्रणाली: विशेषज्ञ श्रम के विभाजन पर एक निबंध , शिकागो विश्वविद्यालय प्रेस।
2) ऑग्सबर्ग, टी. (2005), बीइंग इंटरडिसिप्लिनरी: एन इंट्रोडक्शन टू इंटरडिसिप्लिनरी स्टडीज।

ISSN(Online): 2319-8753
ISSN (Print): 2347-6710

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology

*(An ISO 3297: 2007 Certified Organization)*

*Website: www.ijirset.com*

**Vol. 6, Issue 3, March 2017**

3) डोगन, एम. और पहरे, आर. (1990)। "औपचारिक विषयों का भाग्य: सुसंगतता से फैलाव तक।" रचनात्मक सीमांतता में : सामाजिक विज्ञान के चौराहों पर नवाचार । बोल्डर, सीओ: वेस्टव्यू। पीपी. 85-113.
4) डलेमीजर, पी. (1980)। " जीव विज्ञान को विषयों में विभाजित करना: अराजकता या बहुरूपता? " जर्नल एक्टा बायोथेरेटिका , 29 (2), 87-93।
5) फागिन, आर.; हेल्पर, जेवाई; मूसा, वाई। और वर्दी, एमवाई (1995)। ज्ञान के बारे में तर्क , एमआईटी प्रेस।
6) गिबन्स, एम.; लिमोगेस, सी.; नोवोटी, एच.; श्वार्ट्जमैन, एस.; स्कॉट, पी. एंड ट्रो, एम. (1994)। ज्ञान का नया उत्पादन: समकालीन समाजों में विज्ञान और अनुसंधान की गतिशीलता । लंदन: ऋषि।
7) गोलिंस्की, जे. (1998/2005)। प्राकृतिक ज्ञान बनाना: रचनात्मक, और विज्ञान का इतिहास । न्यूयॉर्क: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस। अध्याय 2: "पहचान और अनुशासन।" भाग II: अनुशासनात्मक साँचा ।
8) हिक्स, डी. (2004)। " सामाजिक विज्ञान के चार साहित्य "। में: मात्रात्मक विज्ञान और प्रौद्योगिकी अनुसंधान की पुस्तिका: एस एंड टी सिस्टम के अध्ययन में प्रकाशन और पेटेंट सांख्यिकी का उपयोग । ईडी। हेंक मोएड।
9) हाइलैंड, के। (2004)। अनुशासनात्मक प्रवचन: अकादमिक लेखन में सामाजिक सहभागिता । नया संस्करण। मिशिगन विश्वविद्यालय प्रेस / ईएसएल।
10) क्लेन, जेटी (1990)। अंतःविषय: इतिहास, सिद्धांत और व्यवहार । डेट्रॉइट: वेन स्टेट यूनिवर्सिटी प्रेस।
11) कृष्णन, आर्मिन (जनवरी 2009), अकादमिक अनुशासन क्या हैं? अनुशासनात्मकता बनाम अंतःविषय बहस (पीडीएफ)
12) लीड्सडॉर्फ, एल। और राफोल्स, आई। (2008)। आईएसआई विषय श्रेणियों पर आधारित विज्ञान का एक वैश्विक मानचित्र । सूचना विज्ञान और प्रौद्योगिकी के लिए अमेरिकन सोसायटी का जर्नल ।
13) लिंडहोम-रोमांट्सचुक, वाई। (1998)। सामाजिक विज्ञान और मानविकी में विद्वानों की पुस्तक समीक्षा: अनुशासन के भीतर और बीच में विचारों का प्रवाह ।
14) मार्टिन, बी। (1998)। सूचना मुक्ति: सूचना शक्ति के भ्रष्टाचार को चुनौती देना । लंदन: फ्रीडम प्रेस
15) मोरिलो, एफ.; बोर्डन, एम। और गोमेज़, आई। (2001)। " अंतःविषय ग्रंथ सूची संकेतकों के लिए एक दृष्टिकोण ।" साइंटोमेट्रिक्स , 51(1), 203–22.